झारखण्ड उच्च न्यायालय राँची

रिट याचिका (आ0) सं0 1173 वर्ष 2023

परवेज अख्तर उम्र लगभग 48 वर्ष पुत्र रफकी आलम, निवासी, 12, आजाद रोड, हजारीबाग, पोस्ट आफिस हजारीबाग, पुलिस थाना हजारीबाग, जिला- हजारीबाग

..... याची

बनाम

1. झारखण्ड राज्य
2. पुलिस अधीक्षक, राँची जिसका कार्यालय कचहरी चाउन, पोस्ट आफिस, जी0पी0ओ0 पुलिस थाना कोतवाली, जिला राँची में है।
3. पुलिस उपाधीक्षक, राँची, जिसका कार्यालय झारखण्ड पुलिस मुख्यालय, धुरवा पोस्ट आफिस धुरवा, पुलिस थाना धुरवा, जिला राँची में है।
4. अधिकारी भार साधक, लोवर बाजार पुलिस थाना, पोस्ट आफिस लोवर बाजार, पुलिस थाना लोवर बाजार, जिला राँची
5. शहजादा मोहम्मद उर्फ मजतुवा उर्फ सोनू, पुत्र स्व0 जलीलरूर रहमान, निवासी 62, डा0 फतेउल्ला रोड, कलाल टोली, पोस्ट आफिस, लोवर बाजार, पुलिस थाना लोवर बाजार, जिला राँची

..... प्रत्यर्थीगण

निर्णीत

मा0 श्री न्यायमूर्ति सुजित नारायण प्रसाद

मा0 श्री न्यायमूर्ति प्रदीप कुमार श्रीवास्तव

याची के लिए - श्री नवीन कुमार सिंह, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी-राज्य के लिए - श्री दीपांकर अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं0 5 के लिए - श्री जितेन्द्र एस0 सिंह अधिवक्ता

श्री फैर्जुर रहमान, अधिवक्ता

सी0ए0वी0/28.02.2024 को निर्णय बाद में दिये जाने के लिए छोड़ना

14.03.2024 को सुनाया गया।

द्वारा सुजित नारायण प्रसाद, न्यायमूर्ति:

1. याची के अवयस्क पुत्र अर्थात् अबूहमजा, उम्र लगभग 10 वर्ष, जिसे विधिक अस्तित्व के बिना प्रत्यर्थी सं0 5 द्वारा अवैध तरीके से निरूद्ध किया गया हैं को तत्काल एवं तुरंत

छोड़ने के लिए प्रत्यर्थी सं0 2-4 को निदेश देेते हुए बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट जारी करने हेतु वर्तमान दाण्डिक रिट याचिका को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन दाखिल किया गया है।

तथ्य:

2. रिट याचिका मे किये गये अभिवचन के अनुसार मामले का संक्षिप्त तथ्य जिसे इसमे परिगणित किया जाना आवश्यक है, निम्नवत पठित है:

याची का विवाह मुस्लिम धार्मिक अनुष्ठान तथा विधि के अनुसार जलीलरूर रहमान की पुत्री सदाव सदाफ के साथ 18.03.2009 को अनुष्ठापित किया गया था। याची की पत्नी ने इसे छोड़ दिया है, लेकिन, ऐसा करते समय, इसने इसके उत्तरजीविता हेतु 18.07.2013 को एक पुत्र अर्थात् अबू हमजा को इसे दिया है तथा पुत्र दिल्ली दखिल स्कूल, हजारीबाग में पढ़ रहा था।

याची की पत्नी बीमार हो गई थी तथा बेहतर चिकित्सा इलाज हेतु माह अक्टूबर 2023 मे, याची ने इस अंजुमान हास्पिटल राँची लाया हैं तथा इसका इलाज राँची मे लगभग 17 दिनो तक जारी था तथा पति होने के नाते वर्तमान याची द्वारा सभी खर्चो को उठाया गया था। तत्पश्चात, जब याची की पत्नी स्वस्थ नही हुई थी, तब 11.11.2023 को स्वयं याची ने अपनी पत्नी को अपने साले के साथ खर्ची के लिए अपने साले को पैसा देते हुए इसके इलाज हेतु वेलोर भेजा था जिसे इलाज के अनुक्रम के दौरन उठाया जायेगा क्योंकि याची की पत्नी ने इसे हजारीबाग में रूकने तथा अपने एक मात्र अवयस्क पुत्र का देख भाल करने के लिए कहा था। याची की पत्नी जीवित नही रह सकी तथा 17.11.2023 को मर गई थी।

इसके पत्नी का अंतिम संस्कार 18.11.2023 को राँची में किया गया था तथा जब याची अपने पुत्र तथा अन्य परिवार के सदस्यो के साथ अपनी पत्नी के अंतिम संस्कार मे भाग लेने के लिए हजारीबाग से राँची आया था, तब साला तथा अन्य नातेदारो तथा बदमाशों ने याची तथा इसकेे संबंधीयों पर हमला किया था, यहां तक कि याची का साला याची के पुत्र को बलपूर्वक अपने अभिरक्षा मे लिया था, इस प्रकार याची जिसके पास कोई विकल्प नही बचा था इसकी सूचना अधिकारी भार साधक, लोवर बाजार पुलिस थाना, राँची को दिया था जिसे लोवर बाजार पुलिस थाना मामला सं0 372 वर्ष 2023 के

रूप में संस्थित किया गया था। याची ने प्रत्यर्थी सं0 5 के विरूद्ध दाण्डिक मामला शिकायत मामला सं0 2000 वर्ष 2020 दर्ज कराया है।

पूर्वोक्त पृष्ठभूमि मे, वर्तमान रिट याचिका को याची के अवयस्क पुत्र को छोड़े जाने हेतु दाखिल किया गया है, जो, वर्तमान में, अपने मामा के साथ रह रहा है।

<u>याची की ओर से आधार:</u>

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री नवीन कुमार सिंह ने निम्न आधारो को लिया है:

(i) याची अवयस्क पुत्र का पिता है, इस प्रकार, हिन्दू अप्राप्तवयता तथा संरक्षकता अधिनियम, 1956 की धारा 6 की सहायता लेते हुए, याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची नैसर्गिक संरक्षक है तथा इसके पास अभिरक्षा में रखने का वैध विधिक अधिकार है। लेकिन अत्यधिक अवैध तरीके से, प्रत्यर्थी सं0 5 जो अवयस्क का मामा हुआ करता है, ने इसे अवैध तरीके से निरूद्ध किया है।

(ii) याची पिता होने के नाते अवयस्क का देखभाल करने के लिए भली भाँति सक्षम है तथा इसके पास वित्तीय जीवन क्षमता है तथा संयुक्त परिवार का हिस्सा है।

(iii) मामा इतना आर्थिक रूप से मजबूत नही है क्योकि प्रत्यर्थी सं0 5 का अपनी पत्नी से विवाह विषयक विवाद है, अतः वह अकेले अवयस्क की देखभाल करने की स्थिति मे नही है।

(iv) याची ने हजारीबाग जिला से क्रिश्चियन मेडिकल हास्पिटल, वेलोर तथा अपनी पत्नी के इलाज मे खर्च किया है लेकिन अपने इलाज के अनुक्रम मे, वह मर गई थी।

(v) अवयस्क को दिल्ली पब्लिक स्कूल, हजारीबाग मे भर्ती कराया गया था जो प्रतिष्ठित स्कूल है तथा इस प्रकार, पिता के नाते, वह इसके कल्याण के प्रयोजन हेतु सभी सावधानी बरत रहा है।

(vi) यह भी आधार लिया गया है कि याची पिता होने के नाते विधिक अधिकार रखता है तथा जब वह अपने पुत्र/अवयस्क के साथ अपने पत्नी के दाह संस्कार के समय पर पहुँचा था, तब इसे प्रत्यर्थी सं0 5 द्वारा अवैध तरीके से रखा गया था, अतः यह अवैध निरोध का मामला है।

(vii) याची के विद्वान अधिवक्ता ने तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य (2019) 7 एससीसी 42 मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय पर भरोसा किया है।

<u>प्रत्यर्थी सं0 5 की ओर से आधार:</u>

4. विद्वान अधिवक्ता श्री फैजउर रहमान द्वारा सहायता प्राप्त प्रत्यर्थी सं0 5 के विद्वान अधिवक्ता श्री जितेन्द्र एस0 सिंह ने विरोध में निम्न आधारो को लिया है:

(i) इस कारण बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट जारी करने के लिए निदेश की माँग करने वाला वर्तमान रिट याचिका पोषणीय नही है कि बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट तब जारी करना चाहिए यदि निरोध अवैध है। इसमें निरोध को अवैध नही कहा जा सकता है क्योकि अवयस्क मामा के साथ रह रहा है जो अवयस्क के कल्याण की देख-रेख कर रहा है।

(ii) अवयस्क की समुचित तरीके से देखभाल नही होगी यदि इसे इसके आचरण के कारण इसके पिता के साथ रहने की अनुमति दी जायेगी क्योकि इसने देख-रेख नही किया हैं तथा ऐसे समय पर अपने मृतका पत्नी को कोई चिकित्सीय उपचार नही दिया है जब वह अतिपाती रोग से ग्रसित थी जो स्वयं रिट याचिका के पैरा 11 मे किये गये अभिवचन से स्पष्ट होगा जिसमे यह अभिवचन किया गया है कि मृतका पत्नी को इसके साला के साथ सीएमसीएच भेजा गया था, जो इसमें प्रत्यर्थी सं0 5 है।

(iii) यह निवेदन किया गया है कि पुराना रोग जिसे असाध्य बताया गया है के समय पर भी चूकि याची की पत्नी तीव्र विषालुता से ग्रसित थी तब कम से कम पीड़ा के पूर्वोक्त समय पर अपने पत्नी का साथ देना याची का परम/नैतिक कर्तव्य था, लेकिन इसने अपनी पत्नी का साथ देने का कष्ट नही उठाया हैं बल्कि साला याची के पत्नी को सीएमसीएन इलाज उपलब्ध कराने के लिए ले गया था। पूर्वोक्त तर्क से, यह काफी कुछ स्पष्ट है कि याची अपनी पत्नी जो जीवित नही है के लिए कोई दिलचस्पी रखने वाला व्यक्ति नही है।

(iv) यह आधार भी लिया गया है कि अवयस्क की आयु लगभग 10-11 वर्ष है तथा इसलिए, विधिक अधिकारों के अतिरिक्त अवयस्क के कल्याण के संबंध में वरीयता दी जानी चाहिए।

(v) आगे, अभिवचन के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि रिट याचिका को हिन्दू अप्राप्तवयता एवं संरक्षकता अधिनियम 1956 की धारा 6 के प्रावधान के अनुसार नैसर्गिक संरक्षक के प्रावधान के प्रयोज्यता के बहाने पर दाखिल किया गया है लेकिन तथ्य की जांच किये बिना कि उक्त अधिनियम मुस्लिम धर्म के मामले में लागू नही होगा चूंकि यह मुस्लिम विधि के अन्तर्गत व्यक्ति तथा अप्राप्तवय के संरक्षकता द्वारा शासित होता है जिसमे

वह प्रावधान अन्तर्विष्ट है जैसा धारा-3 के अन्तर्गत इसमे प्राप्तवयता के उम्र को परिभाषित किया गया है।

जहाँ तक बालक के कल्याण के विवाद्यक का संबंध है, अवयस्क सभी देख रेख के साथ रह रहा है तथा राँची मे एक स्कूल मे भर्ती भी कराया गया है, अतः वर्तमान रिट याचिका खारिज किये जाने योग्य है।

<u>विश्लेषण:</u>

5. इस न्यायालय ने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना है, रिट याचिका मे किये गये अभिवचन तथा रिट याचिका में किये गये अभिवचन के जवाब में दाखिल शपथ पत्र का परिशीलन किया है।

6. किये गये अभिवचन के अनुसार इसमे स्वीकृत तथ्य यह है कि याची अवयस्क अर्थात् अबूहमजा का पिता है, जो 10-11 वर्ष के उम्र का है। पिता का दावा है कि वह वित्तीय रूप से जीवन जीवनक्षम है तथा 4 करोड़ वार्षिक वारा न्यारा का व्यापार है। पत्नी कैंसर के कारण मर गई है। अवयस्क वर्तमान मे अपने मामा के साथ रह रहा है। इस प्रकार की परिस्थितियों में, वर्तमान रिट याचिका को इस घोषणा के लिए दाखिल किया गया है कि मामा के पास अवयस्क की अभिरक्षा अवैध है।

7. जबकि दूसरी तरफ, प्रत्यर्थी सं0 5 के विद्वान अधिवक्ता ने निरोधमे तर्क दिया है कि रिट याचिका पोषणीय नही है क्योकि अपने मामा के पास अवयस्क की अभिरक्षा को अवैध निरोध नही कहा जा सकता है, इस प्रकार पोषणीयता के विवाद्यक को इस आधार पर उठाया गया है कि अवैध निरोध की कोई घोषणा नही हो सकती है जब शिकायत के निवारण हेतु संरक्षक तथा प्रतिपाल्य अधिनियम 1890 के अन्तर्गत वैकल्पिक उपचार हो चूँकि विवाद्यक इस तथ्य के न्याय निर्णयन से संबंधित है कि बालक की देखभाल पिता द्वारा या मामा द्वारा की जायेगी जहाँ तक इसके कल्याण का संबंध है।

8. अवयस्क के पंसद/इच्छा को प्राथमिकता दी जानी चाहिए तथा चूँकि अवयस्क की उम्र लगभग 10-11 वर्ष है, तथा इसकी इच्छा आवश्यक है जिसका मूल्यांकन अधिकारिता के सक्षम न्यायालय के समक्ष बालक को पेश करके किया जा सकता है यदि कार्यवाही को गतिशील किया जायेगा। लेकिन, सर्वसम्मति से, रिट अधिकारिता के अन्तर्गत नही जो अभिवचन पर आधारित संक्षिप्त कार्यवाही है।

<u>वर्तमान रिट याचिका के पोषणीयता पर विवाद्यकः</u>

9. इसलिए, इस न्यायालय की राय है कि सर्व प्रथम पोषणीयता के विवाद्यक का विनिश्चय किया जाना आवश्यक है कि क्या मामले के तथ्यों तथा परिस्थितियों में, वर्तमान रिट याचिका बंदी प्रत्यक्षीकरण जारी करने के लिए पोषणीय है।

10. ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) के मामले में विधि सुस्थापित है कि अभिरक्षा के मामले मे भी, बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट भली भाँति पोषणीय है। सुसंगत पैरा का सदर्भ इसमे किया जाना आवश्यक है, जो निम्नवत पठित है:

> *''14. बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट अवैध या अनुचित निरोध से तत्काल रिहाई के प्रभावी साधनो को देते हुए व्यक्ति के स्वतंत्रता को सुनिश्चित करने के लिए एक परमाधिकार प्रक्रिया है। रिट अपना प्रभाव अवयस्क की अभिरक्षा इसके संरक्षक को लौटाने तक विस्तारित है जिसे अन्यायपूर्वक इससे वंचित किया जाता है। उस व्यक्ति द्वारा अवयस्क का निरोध जो इसके विधिक अभिरक्षा का हकदार नही है को अवयस्क बालक के अभिरक्षा का निदेश देते हुए रिट अनुदत्त करने के प्रयोजन हेतु अवैध निरोध के समान माना जाता है। व्यक्ति से अवयस्क के अभिरक्षा को लौटाने के लिए जो स्वीयविधि के अनुसार, इसका विधिक या नैसर्गिक संरक्षक नही है, समुचित मामलो से रिट न्यायालय के पास अधिकारिता होती है।*
>
> *19. बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाहियाँ अभिरक्षा के विधिकता की जाँच करने या न्यायसंगत ठहराने के लिए नही होता है। बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाहियाँ एक माध्यम है जिसके द्वारा बालक के अभिरक्षा को न्यायालय के विवेकाधिकार के लिए निवेदित किया जाता है बंदी। प्रत्यक्षीकरण एक परमाधिकार रिट है जो असाधारण उपचार है तथा रिट वहाँ जारी किया जाता है जहां विशेष मामले के परिस्थितियां मे, विधि द्वारा उपवंधित सामान्य उपचार या तो उपलब्ध नही होता है या प्रभावहीन होता है; अन्यथा रिट जारी नही किया जायेगा। बालक के अभिरक्षा के मामलो में रिट अनुदत्त करने मे उच्च न्यायालय की शक्ति मात्र ऐसे मामलो मे सीमित होता है जहां उस व्यक्ति द्वारा अवयस्क का निरोध किया जाता है जो इसके विधिक अभिरक्षा का हकदार होता है। उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों द्वारा प्रश्नगत विवाद्यक पर निर्णय के दृष्टिगत, हमारे विचार मे,*

बालक के अभिरक्षा के मामलो मे, बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट पोषणीय होता है जहां यह साबित किया जाता है कि माता पिता या अन्य द्वारा अवयस्क बालक का निरोध अवैध तथा विधि के किसी प्राधिकार के बिना है।

20. बालक के अभिरक्षा के मामले में, सामान्य उपचार मात्र हिन्दू अप्राप्तवयता तथा संरक्षकता अधिनियम या संरक्षक तथा प्रतिपाल्य अधिनियम जैसी भी स्थिति है के अधीन होता है। संरक्षक तथा प्रतिपाल्य अधिनियम के अन्तर्गत कार्यवाहियां से उद्भूत मामलो में, न्यायालय के अधिकारिता को अवधारित किया जाता है कि क्या अवयस्क सामान्यतया उस क्षेत्र मे रहता हैं जिस पर न्यायालय इस प्रकार के अधिकारिता का प्रयोग करता है। संरक्षक तथा प्रतिपाल्य अधिनियम के अन्तर्गत जाँच तथा रिट न्यायालय द्वारा शक्तियों के प्रयोग के बीच महत्वपूर्ण अन्तर है जो प्रकृति में संक्षिप्त है। बालक का कल्याण महत्वपूर्ण होता है। रिट न्यायालय में, अधिकारो को मात्र शपथपत्रो के आधार पर अवधारित किया जाता है। जहाँ न्यायालय का विचार होता है कि विस्तृत जाँच आवश्यक है, न्यायालय असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करने से इंकार कर सकता है तथा पक्षकारो को सिविल न्यायालय जाने का निदेश दे सकता है। यह मात्र आपवादिक मामलो मे होता है, अवयस्क के अभिरक्षा के संबंध मे पक्षकारो का अधिकार बंदी प्रत्यक्षीकरण हेतु याचिका पर असाधारण अधिकारिता के प्रयोग मे अवधारित किया जायेगा।

11. विधि भी सुस्थापित है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत रिटो के विशेषाधिकार के प्रयोग मे कोई रोक नही है बल्कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति मे कोई निर्वन्धन नही है तथा यदि कोई निर्बन्धन है, यह उच्च न्यायालय द्वारा स्वगृहीत निर्वन्धन है। इस संबंध में संदर्भ ***महाराष्ट्र शतरंज संघ बनाम भारत संघ तथा अन्य (2020) 13 एससीसी 285*** के मामले मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय के संबंध में किया जा सकता है, मा0 शीर्ष न्यायालय ने अधिकथित किया है कि वैकल्पिक फोरम का होना मात्र, जहां व्यथित पक्षकारगण अनुतोष प्राप्त कर सकते है, अपने अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए उच्च न्यायालय पर कोई विधिक रोक सृजित नही करता है, बल्कि कई कारको में उच्च न्यायालय द्वारा ध्यान मे रखे जाने वाला एक कारक है। निर्णय, क्या अपने रिट अधिकारिता मे कार्य पर

विचार किया जाय या नही विशेष मामले केे तथ्यो तथा परिस्थितियो के जाँच के बाद उच्च न्यायालय द्वारा लिया जाने वाला निर्णय है।

मात्र वैकल्पिक फोरमो का होना, जहाँ व्यथित पक्षकारगण अनुतोष प्राप्त कर सकते है, अपने अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए उच्च न्यायालय पर विधिक रोक सृजित नही करता है, बल्कि यह कई कारको मे उच्च न्यायालय द्वारा ध्यान में रखा जाने वाला एक कारक है। पूर्वोक्त निर्णय का पैरा-19 तथा 22 निम्नवत् पठित है:

> *19.... वैकल्पिक उपचार का होना, चाहे पर्याप्त हो या न हो, उच्च न्यायालय के रिट अधिकारिता के मूलभूत रूप से वैवेकिक प्रकृति को परिवर्तित नही करता हैं तथा इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा रिट अधिकारिता के प्रयोग पर पूर्ण विधिक रोक सृजित नही करता हैं। निर्णय क्या अपने रिट अधिकारिता के अन्तर्गत कार्य पर विचार किया जाय या नही विशेष मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियो के जाँच केे बाद उच्च न्यायालय द्वारा लिया जाने वाला निर्णय रहता है।*
>
> *22. वैकल्पिक फोरमो का होना मात्र जहां व्यथित पक्षकार अनुतोष प्राप्त कर सकता है अपने रिट अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए उच्च न्यायालय पर विधिक रोक सृजित नही करता है। यह कई कारको मे उच्च न्यायालय द्वारा ध्यान मे रखा जाने वाला कारक है।*

12. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि रिट याचिका को निम्न संभाव्यताओ में पोषणीय कहा जायेगा:

(i) यदि नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का उल्लंघन लिया जाता है।

(ii) यदि निर्णय कानूनी आदेश केे प्रतिकूल किया गया है।

(iii) यदि लिया गया निर्णय घोर अन्याय के तुल्य है।

13. यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि जहां तथ्य के विवादित प्रश्न का न्यायनिर्णयन आवश्यक होता है तब, रिट न्यायालय विवाद्यक का न्यायनिर्णयन करने हेतु मामले को अग्रसर करने मे सीमित होगा। इस प्रकार का सिद्धान्त इस तथ्य पर आधारित है कि यदि मामला एक मात्र अभिवचन के आधार पर विनिश्चित किया जाना पूर्णतया असंभव होता हैं तब इस प्रकार की परिस्थितियो मे, विवाद्यक का न्यायनिर्णयन करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के शक्ति का प्रयोग करना उच्च न्यायालय के लिए

न्यायपूर्ण तथा उचित नही होगा जो तथ्यात्मक पहलू पर निर्भर हैं जिसका सक्षम न्यायालय द्वारा मूल्यंाकन आवश्यक है।

14. जहां तक अवयस्क के संरक्षकता का संबंध है, इस न्यायालय ने विधि के सुस्थापित स्थिति तथा वर्तमान मामले के तथ्यो के कसौटी में तथ्यात्मक पहलू की जाँच किया है।

15. विधि सुस्थापित है कि जहां तक विधिक अधिकार का संबंध है, पिता नैसर्गिक अभिभावक है। लेकिन, संरक्षकता के विवाद्यक पर विधिक अधिकार के अतिरिक्त कल्याण पर विचार किया जाना चाहिए तथा यदि उच्च न्यायालय का विचार है कि विस्तृत जाँच यदि आवश्यक है, न्यायालय असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करने से इंकार कर सकता है तथा पक्षकारो को सिविल न्यायालय जाने का निदेश दे सकता है। इस संबंध में ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय के संबंध में संदर्भ किया जा सकता है।

यह निर्दिष्ट किया जाना भी आवश्यक है कि उक्त निर्णय पर, स्वयं याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा रखा गया है।

16. जहां तक तथ्य पर निर्णय के प्रयोज्यता का संबंध है, इस पर विचार ऐसे समय पर किया जायेगा जब गुणावगुण पर विवाद्यक की विवेचना की जायेगी।

17. जहां तक वर्तमान मामले के तथ्य का संबंध है, अवयस्क की आयु लगभग 10-11 वर्ष है तथा इस प्रकार, वह इसे व्यक्त करते हुए अपने प्राथमिकता के बारे मे कहने की स्थिति मे है कि क्या वह ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा अधिकथित विनिश्चयाधार विशेष रूप से उक्त निर्णय के पैरा 20, 21 तथा 26 मे किये गये संप्रेक्षण के अनुसार अपने तन्दुरूस्ती तथा कल्याण के लिए जीना चाहता है, जो निम्नवत पठित है:-

> *''20. बालक के अभिरक्षा के मामलो मे, सामान्य उपचार मात्र हिन्दू अप्राप्तवयता तथा संरक्षकता अधिनियम या संरक्षक तथा प्रतिपाल्य अधिनियम जैसी भी स्थिति हो के अन्तर्गत होता है। संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अन्तर्गत कार्यवाहियो से उद्भूत मामलो मे, न्यायालय के अधिकारिता को अवधारित किया जाता हैं कि क्या अवयस्क सामान्यतया उस क्षेत्र मे रहता है जिस पर न्यायालय इस प्रकार के अधिकारिता का प्रयोग करता है। संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अन्तर्गत जांच तथा रिट न्यायालय द्वारा शक्तियो के प्रयोग के बीच*

महत्वपूर्ण अंतर होता हैं जो प्रकृति मे संक्षिप्त है। बालक का कल्याण महत्वपूर्ण होता है। रिट न्यायालय मे, अधिकारो को मात्र शपथपत्रो के आधार पर अवधारित किया जाता है। जहां न्यायालय का विचार होता है कि विस्तृत जांच आवश्यक हैं, न्यायालय असाधारण अधिकारिता का प्रयोग से करने से इंकार कर सकता है तथा पक्षकारो को सिविल न्यायालय जाने का निदेश दे सकता है। यह केवल आपवादिक मामलो में होता है, अवयस्क के अभिरक्षा के संबंध में पक्षकारो का अधिकार बंदी प्रत्यक्षीकरण हेतु याचिका पर असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करने मे अवधारित किया जायेगा।

*21. वर्तमान मामले मे, अपीलार्थीगण माँ जेलम के बहन तथा भाई है जिनके पास अवयस्क बालक को अभिरक्षा मे रखने के लिए विधि का कोई प्राधिकार नही है। जबकि हिन्दू अप्राप्तवयता तथा संरक्षकता अधिनियम की धारा 6 के अनुसार, प्रथम प्रत्यर्थी पिता अवयस्क बालक का नैसर्गिक संरक्षक है तथा इसके पास बालक की अभिरक्षा मे दावा का विधिक अधिकार है। बालक की अभिरक्षा के संबंध मे पिता की हकदारी विवादित नही हैं तथा बालक अवयस्क उम्र 1 वर्ष का होने के नाते अपने **समझदार प्राथमिकता** को व्यक्त नही कर सकता है। अतः हमारे सुविचारित राय मे, इस मामले के तथ्यो तथा परिस्थितियो मे, पिता नैसर्गिक संरक्षक होने के नाते, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन बालक के अभिरक्षा की माँग करते हुए असाधारण उपचार का अवलंब लेने मे न्यायानुमोद्य है।*

अवयस्क बालक का कल्याण सर्वोपरि ध्यान

26. न्यायालय बालक के अभिरक्षा के मामलो का विनिश्चय करते समय माता पिता या संरक्षक के मात्र विधिक अधिकार द्वारा वाध्य नही होता है। यद्यपि विशेष कानूनो का प्रावधान माता पिता या संरक्षको के अधिकारों को नियंत्रित करता है, लेकिन अवयस्क बालक के अभिरक्षा से संबंधित मामलो मे अवयस्क का कल्याण सर्वोच्च ध्यान होता है। न्यायालय के लिए सर्वोपरि ध्यान बालक का हित तथा बालक का कल्याण होना चाहिए।

18. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान याचिका पोषणीय नही है, यह न्यायालय इस आधार पर इस प्रकार के

निवेदन से सहमत नही है कि रिट याचिका संरक्षकता के मामले में भी पोषणीय हैं जिससे इस निष्कर्ष पर आया जा सके कि क्या तथ्य के आधार पर, मात्र इस आधार पर रिट न्यायालय द्वारा समुचित निदेश पारित किया जाना चाहिए कि पिता नैसर्गिक संरक्षक है जिससे इस निष्कर्ष पर आया जा सके कि कहाँ बालक का कल्याण बेहतर होगा।

इस प्रकार याची को वैकल्पिक फोरम के समक्ष जाने के लिए पीछे करते हुए निष्कर्ष पर आने के लिए, तथ्यात्मक पहलू की छानबीन किया जाना आवश्यक है जिससे इस निष्कर्ष पर आया जा सके कि बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट जारी करने हेतु इस न्यायालय द्वारा कोई निदेश हो सकता है।

19. बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट जारी करने के लिए रिट याचिका के पोषणीयता का विवाद्यक एक चीज है तथा अवयस्क के समझदार प्राथमिकता को ध्यान मे रखते हुए याची के विचार से सहमत न होना एक दूसरी चीज है जिससे इस निष्कर्ष पर आया जा सके कि क्या शिकायत के निवारण हेतु सिविल अधिकारिता के सक्षम न्यायालय के समक्ष मामले को पीछे करने हेतु यह उपयुक्त मामला है, इसलिए, इस न्यायालय की राय है कि रिट कायम रखा जाना चाहिए तथा तद्नुसार, रिट याचिका पोषणीय है।

गुणावगुण पर विवेचना:

20. अभिकथन से यह स्पष्ट है कि शिकायत का आधार हिन्दू अप्राप्तवयता तथा संरक्षकता अधिनियम 1956 का प्रावधान है। याची अधिनियम 1956 की धारा 6 के अनुसार अपने विधिक अधिकार के आधार पर बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट की माँग कर रहा है।

लेकिन, जब न्यायालय ने याची के विद्वान अधिवक्ता का सामना किया है कि जब याची का धर्म भिन्न हो जो मुस्लिम विधि द्वारा शासित होना चाहिए तब कैसे हिन्दू अप्राप्तवयता तथा संरक्षकता अधिनियम 1956 का प्रावधान लागू होगा।

याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि यह लागू नही होगा लेकिन सिद्धान्त एक ही होगा।

लेकिन यह न्यायालय इस प्रकार के निवेदन से सहमत नही है कारण यह हेै कि उक्त अधिनियम की धारा 6 के अन्तर्गत, अवयस्क के शरीर के संबंध में तथा अवयस्क के सम्पत्ति के संबंध में हिन्दू अवयस्क का नैसर्गिक संरक्षक पाँच वर्ष के उम्र तक माँ होती है।

21. तर्क पेंश किया गया है कि उक्त अधिनियम की धारा 4 के अनुसार, अवयस्क का मतलब वह व्यक्ति है जिसने अठारह वर्ष की आयु को पूरा नही किया है जबकि उक्त अधिनियम की धारा 6 के अन्तर्गत, पाँच वर्ष की उम्र तक अवयस्क सामान्यतया माँ के पास होगा।

22. यह निवेदन किया गया है कि तर्क इस सिद्धान्त पर आधारित हेै कि कौन अवयस्क की देखभाल करेगा क्या पिता या माता चूॅकि मॉ जीवित नही है।

23. याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्क की पुष्टि करने के लिए ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय पर भरोसा किया है कि नैसर्गिक संरक्षक पिता है।

24. इस न्यायालय का ***तेजस्वनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय का परिशीलन करने के बाद विचार है कि एक तरफ उक्त निर्णय ने बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट जारी करने के प्रयोजन हेतु रिट याचिका कायम रखने के संबंध में विनिश्चयाधार अधिकथित किया है जबकि दूसरी तरफ तथ्य पर विवाद्यक पर विचार अवयस्क के उम्र को ध्यान में रखते हुए किया गया है।

25. यहाँ यह निर्दिष्ट करना आवश्यक है कि तथ्यो पर मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय की प्रयोज्यता इस विचार हेतु विषयवस्तु हैं कि क्या तथ्य पर निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यो के साथ लागू होता है जो सिद्धांततः यह है कि निर्णय के प्रयोज्यता की जाँच मामले को नियंत्रित करने वाले तथ्यो के आधार पर की जानी चाहिए जैसा डा0 ***सुब्रम्ण्यम स्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य*** **तथा अन्य (2014) 5 एससीसी 75** मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, जिसमे पैरा 47 मे यह अभिनिर्धारित किया गया है जो निम्नवत पठित है:-

''47. यह सुस्थापित विधिक प्रतिपादना है कि किसी निर्णय के विनिश्चयाधार को उस मामले के तथ्यों के पृष्ठभूमि मे समझा जाना चाहिए तथा मामला मात्र प्राधिकार है जिसके लिए यह वास्तव मे विनिश्चय करता है तथा नही कि इससे क्या तार्किक रूप से समझा जाता है। न्यायालय को विवेचना किये बिना निर्णयो पर भरोसा नही रखना चाहिए कि कैसे तथ्यात्मक स्थिति निर्णय के तथ्य स्थिति के साथ उपयुक्त हेै जिस पर भरोसा रखा गया है।

26. आरंभ में, इसमे यह निर्दिष्ट किया जाना आवश्यक है कि उक्त निर्णय हिन्दू अप्राप्तवयता तथा संरक्षकता अधिनियम 1956 के संबंध में है लेकिन सिद्धांत जैसा पूर्वोक्त निर्णय मे अधिकथित है का अनुसरण करने के प्रयोजन हेतु भी, इसमे यह निर्दिष्ट करना सुसंगत होगा कि मा0 शीर्ष न्यायालय पैरा 19 के अधीन यह धारित करने की कृपा किया है कि बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही अभिरक्षा के विधिकता की जाँच करने या न्यायसंगत ठहराने के लिए नही होता है। बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाहियाँ एक माध्यम है जिसके द्वारा बालक का अभिरक्षा न्यायालय के विवेकाधिकार पर छोड़ा जाता है। बंदी प्रत्यक्षीकरण परमाधिकार रिट है जो असाधारण उपचार है तथा रिट वहाँ जारी किया जाता है जहां मामले विशेष के परिस्थितियो में विधि द्वारा उपबंधित सामान्य उपचार या तो उपलब्ध नही होता हैं या प्रभावहीन होता है, अन्यथा रिट जारी नही किया जायेगा। बालक के अभिरक्षा के मामलो मे, रिट अनुदत्त करने में उच्च न्यायालय की शक्ति मात्र उन मामलो तक सीमित होता है जहां अवयस्क का निरोध उस व्यक्ति द्वारा किया जाता है जो इसके विधिक अभिरक्षा का हकदार नही होता है। त्वरित संदर्भ हेतु, उक्त निर्णय के पैरा 19 को निम्नवत निर्दिष्ट किया जा रहा है:

> *''19. बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाहियाँ अभिरक्षा के विधिकता की जॉच करने या न्यायसंगत ठहराने के लिए नही होती है। बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाहियाँ एक माध्यम है जिसके द्वारा बालक की अभिरक्षा न्यायालय के विवेकाधिकार पर छोड़ा जाता है। बंदी प्रत्यक्षीकरण परमाधिकार रिट है जो असाधारण उपचार है तथा रिट वहाँ जारी किया जाता है, जहाँ विशेष मामले के परिस्थितियो में, विधि द्वारा उपबंधित सामान्य उपचार या तो उपलब्ध नही होता है या निष्प्रभावी होता है; अन्यथा रिट जारी नही किया जायेगा। बालक के अभिरक्षा के मामलो मे, रिट अनुदत्त करने मे उच्च न्यायालय की शक्ति मात्र उन मामलो तक सीमित है जहां उस व्यक्ति द्वारा अवयस्क का निरोध किया जाता है जो इसके विधिक अभिरक्षा का हकदार नही होता है। उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयो द्वारा प्रश्नगत विवाद्यक पर निर्णय के दृष्टिगत, हमारे विचार मे, बालक के अभिरक्षा के मामलो मे, बंदी प्रत्यक्षीकरण का रिट पोषणीय होता है जहाँ यह साबित किया जाता है कि माता पिता या अन्य द्वारा अवयस्क बालक का निरोध अवैध तथा विधि के किसी प्राधिकार के बिना है।''*

27. उक्त निर्णय के पैरा 20 मे, मा0 शीर्ष न्यायालय ने यह धारित किया है कि संरक्षक तथा प्रतिपाल्य अधिनियम के अन्तर्गत कार्यवाहियो से उद्भूत मामलो में, न्यायालय की अधिकारिता अवधारित की जाती है कि क्या अवयस्क सामान्यतया उस क्षेत्र मे रहता है जिस पर न्यायालय इस प्रकार के अधिकारिता का प्रयोग करता है।

मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा आगे संरक्षक तथा प्रतिपाल्य अधिनियम के अन्तर्गत जाँच तथा रिट न्यायालय द्वारा शक्तियो का प्रयोग जो प्रकृति मे संक्षिप्त है के बीच अंतर को संप्रेक्षित किया गया है।

आगे यह संप्रेक्षित किया गया है कि रिट न्यायालय मे, अधिकारो का अवधारण मात्र शपथ पत्रों के आधार पर किया जाता है। जहाँ न्यायालय की राय है कि विस्तृत जाँच आवश्यक है, न्यायालय असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करने से इंकार कर सकता हैं तथा पक्षकारो को सिविल न्यायालय जाने का निदेश दे सकता है। सुसंगत पैरा अर्थात् पैरा 20 को उत्कथित किया गया है तथा ऊपर निर्दिष्ट है।

आगे संप्रेक्षण यह है कि बालक का कल्याण महत्वपूर्ण है लेकिन प्रमुख ध्यान बालक की समझदार प्राथमिकता है जिसे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) मे ध्यान मे रखा गया है।

28. पैरा 26 से आगे प्रतीत होता है जिसमे यहे संप्रेक्षण करते हुए अवयस्क बालक के कल्याण पर बल दिया गया है कि बालक के अभिरक्षा के मामले माता पिता या संरक्षक के मात्र विधिक अधिकार द्वारा बाध्य नही होता है बल्कि अवयस्क का समझदार प्राथमिकता सर्वोपरि ध्यान होता है।

29. जहाँ तक बालक के कल्याण के विवाद्यक का संबंध है, यह भी सर्वोपरि ध्यान है लेकिन इसे भी बालक के समझदार प्राथमिकता के आधार पर ध्यान में रखा जाना चाहिए। इस संबंध मे संदर्भ ***कीर्तिकुमार महेशंकर जोशी बनाम पदीप कुमार करूणा शंकर जोशी (1992) 3 एससीसी 573*** मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय के संबंध में किया जा सकता है जिसमे मामले का तथ्य यह था कि बच्चो का पिता भा0द0सं0 की धारा 498-क के अधीन आरोप का सामना कर रहा था तथा बच्चो ने अपने मामा के साथ रहने की अपनी इच्छा व्यक्त किया था जो इनकी भली भॉति देखभाल कर रहा था तथा बच्चो ने अपने पिता के साथ न जाने की अपनी इच्छा व्यक्त किया था। मा0 उच्चतम न्यायालय ने बच्चो भी अपनी इच्छा व्यक्त किया था। मा0 उच्चतम न्यायालय

ने बच्चो को अपने कल्याण को समझने मे पर्याप्त समझदार पाया था तथा मामले के परिस्थितियो मे, अभिरक्षा इनके पिता के बजाय मामा को सौपा था।

> *''7. हमारे आदेश दिनंाक मार्च 27, 1992 के अनुसरण मे, बच्चे अर्थात विशाल तथा रिक्ता हमारे समक्ष इन चैम्बर कार्यवाहियो में उपस्थित है। इनके मामा कीर्तिकुमार तथा इनके पिता प्रदीप कुमार भी उपस्थित है। विशाल तथा रिक्ता दोनो समझदार बच्चे है। ये लोग अपने उम्र की अपेक्षा अधिक परिपक्व है। हमने चैम्बर में एक मात्र लगभग 20/25 मिनट तक बच्चो से बातचीत किया था। ये दोनो अपने पिता के बारे मे कटु है तथा अपने पिता के हाथो अपनी माँ के साथ दुर्व्यवहार प्रदर्शित करते हुए कई घटनाओ का वर्णन किया था। इन लोगो ने स्पष्ट रूप से कहा था कि ये लोग अपने पिता के साथ रहना नही चाहते हैं। इन लोगो ने आगे कहा कि ये लोग अपने मामा के साथ काफी खुश है जो इनकी भली भाँति देखभाल कर रहा है। हमने बच्चो को कुछ समय के लिए अपने पिता के साथ जाने तथा रहने के लिए राजी करने का प्रयास किया था लेकिन इन लोगो ने इस समय ऐसा करने से इंकार किया था। बच्चो से बातचीत करने तथा इनके मनोदशा का मूल्यांकन करने के बाद, हमारी राय है कि बच्चो को इनके पिता प्रदीप कुमार के अभिरक्षा मे सौंपना बच्चो के हित तथा कल्याण मे नही होगा। हम जानते है कि पिता के पास नैसर्गिक संरक्षक होने के नाते अपने अवयस्क बच्चो के अभिरक्षा का अधिमानी अधिकार है **लेकिन इस मामले के तथ्यो तथा परिस्थितियो तथा बच्चो की इच्छा को दृष्टिगत रखते हुए, जो हमारे अनुसार अपने कल्याण को समझने के लिए पर्याप्त समझदार है, हम इस प्रक्रम पर विशाल तथा रिक्ता की अभिरक्षा इनके पिता को सौंपने के लिए प्रवृत्त नही है।***

30. जहाँ तक ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) के मामले मे दिये गये निर्णय के प्रयोज्यता का संबंध है, इसमे अभिरक्षा पिता के पक्ष मे अनुज्ञात करते हुए, मा0 शीर्ष न्यायालय ने बच्चे के उम्र को ध्यान मे रखा है जो लगलग 1 वर्ष की उम्र का था तथा इसके पंसद का अभिनिश्चय इस प्रक्रम पर नही किया जा सकता है। समय बीतने के साथ, वह अपीलार्थीगण के साथ संबंध और बढ़ा सकती है तथा कुछ समय के बाद, वह अपने पिता के साथ जाने के लिए अनिच्छुक हो

सकती हैं इस मामले मे, पहला प्रत्यर्थी अपने बच्चे के प्रेम तथा अनुराग से पूर्णतया वंचित हो सकता है।

31. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि संरक्षकता के विवाद्यक पर विचार करते हुए न्यायालय का प्रमुख ध्यान अवयस्क का कल्याण है जो अंततोगत्वा समझदार प्राथमिकता पर निर्भर होगा जैसा कीर्तिकुमार ***महेशशंकर जोशी बनाम पदीप कुमार करूणा शंकर जोशी*** (ऊपर) मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है।

32. ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा*** अन्य (ऊपर) मे दिये गये मामले मे याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा अधिक बल दिया गया है, इसलिए, तथ्यात्मक पहलू पर विचार करना न्यायालय का परम कर्तव्य है जिससे इस निष्कर्ष पर आया जा सके कि क्या तथ्यो पर आधारित उक्त निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यो तथा परिस्थितियो मे लागू होता है या नही।

33. उक्त मामले मे, अवयस्क की आयु डेढ़ वर्ष थी तथा अपने मामी के साथ रह रही थी तथा उस समय जब अवयस्क की माँ विषालुता से पीड़ित गम्भीर रूप से बीमार थी, अवयस्क के पिता ने इसे अपीलार्थीगण के पास छोड़ दिया तथा इसके मृत्यु के बाद इसने अवयस्क के अभिरक्षा की माँग किया है।

मा0 शीर्ष न्यायालय ने यह संप्रेक्षण करते हुए कि विधिक अधिकार को अवयस्क के कल्याण पर अभिभावी होने की अनुमति नही दी जायेगी तथा यह संप्रेक्षित किया गया है कि अवयस्क के प्राथमिकता पर विचार किया जाना आवश्यक है लेकिन चूकि अवयस्क की उम्र लगभग डेढ़ वर्ष थी, इस प्रकार, अपने समझदार प्राथमिकता को व्यक्त करने की स्थिति मे नही थी तथा इस बात को दृष्टिगत रखते हुए अवयस्क की अभिरक्षा पिता को सौपी गई थी।

34. लेकिन, इसमे, मामले का तथ्य पूर्णतया भिन्न है क्योकि इसमे अवयस्क की उम्र 10-11 वर्ष है जो अपने समझदार प्राथमिकता को व्यक्त करने के लिए पर्याप्त सक्षम है। जबकि ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) के मामले मे बच्चे की उम्र 1 वर्ष थी तथा इसलिए बच्चा अपनी प्राथमिकता को व्यक्त करने की स्थिति मे नही था जिसके कारण मा0 शीर्ष न्यायालय ने बच्चे की अभिरक्षा पिता के पक्ष मे सौपा था। लेकिन, इसमे, चूँकि बच्चे की उम्र 10-11 वर्ष है तथा अपने पिता के साथ या अपने मामा के साथ रहने की अपने प्राथमिकता को व्यक्त करने के

लिए पर्याप्त सक्षम है लेकिन उक्त विवाद्यक का विनिश्चय साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए सिविल अधिकारिता के संबंधित न्यायालय द्वारा किया जाना आवश्यक है।

35. मा0 शीर्ष न्यायालय ने ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) के मामले मे यह संप्रेक्षित किया है कि संरक्षकता का विवाद्यक संक्षिप्त कार्यवाही मे विनिश्चत किये जाने के लिए उपयुक्त नही है बल्कि इस तथ्य के दृष्टिगत सिविल अधिकारिता के सक्षम न्यायालय द्वारा विनिश्चत किये जाने की आवश्यकता है कि अवयस्क के समझदार प्राथमिकता तथा कई अन्य चीजो का न्यायनिर्णयन किया जाना आवश्यक है।

36. इसमे यह भी मामला नही है कि अवयस्क अपने प्राथमिकता को व्यक्त करने के लिए स्थिति में नही है जिसे यह न्यायालय संक्षिप्त कार्यवाही मे लेखबद्ध नही कर सकता है भले ही न्यायालय रिट अधिकारिता के अधीन कार्यवाही मे लेखबद्ध करना चाहता है, यह हमारे सुविचारित राय के अनुसार इस आधार पर न्यायसंगत तथा उचित नही होगा कि राय संबंधित न्यायालय द्वारा अन्य दस्तावेजो जिसका बालक के कल्याण से संबंध है का मूल्यांकन करते हुए दिया जाना चाहिए जिसे निष्कर्ष पर आना है।

37. इस न्यायालय का पूर्वोक्त प्रयोजन हेतु ऊपर किये गये विवेचना के आधार पर तथा ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) के मामले के तथ्यो के साथ इस मामले मे अर्न्तवलित तथ्यात्मक पहलू के मूल्यांकन के बाद विचार है कि यह पूर्णतया भिन्न है तथा इसलिए, तथ्य पर ***तेजस्विनी गौड़ तथा अन्य बनाम शेखर जगदीश प्रसाद तिवारी तथा अन्य*** (ऊपर) के मामले मे मा0 शीर्ष न्यायालय द्वारा तथ्य पर विचार करने के पश्चात् आधारित रिट याची के पक्ष मे अवयस्क के अभिरक्षा को सौपते हुए समान निदेश पारित करना इस न्यायालय के लिए उचित नही होगा।

38. याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह आधार लिया है कि वह संयुक्त परिवार मे रह रहा है जिसके पास रू0 4 करोड़ वार्षिक व्यापार की अच्छी वित्तीय जीवन क्षमता है, दादी भी जीवित है तथा इस प्रकार, अवयस्क का देखभाल इनके संरक्षकता मे भली भाँति होगा।

जबकि दूसरी तरफ, प्रत्यर्थी की ओर से याची के विरूद्ध अपने पत्नी के साथ क्रूरता करने तथा समुचित इलाज उपलब्ध न कराने का अभिकथन आरोपित किया गया है।

39. यह स्पष्ट है कि न्यायनिर्णयन मे इच्छा सहित तथ्यात्मक पहलू का मूल्यांकन आवश्यक हैं जिसे बालक द्वारा व्यक्त किया जाना है जिससे समझदार प्राथमिकता का मूल्यंाकन किया जा सके क्योकि अवयस्क अपने प्राथमिकता को व्यक्त करने के लिए काफी पर्याप्त है। इसलिए, पूर्वोक्त तथ्य का तथ्य के मूल्यांकन पर आधारित न्यायनिर्णयन आवश्यक है, अतः, बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट जारी करते हुए असाधारण आरंभिक अधिकारिता का प्रयोग करना इस न्यायालय के लिए उचित नही होगा।

40. तद्नुसार, वर्तमान रिट याचिका को खारिज किया जाता है।

41. लंबित अर्न्तवर्ती आवेदन,यदि कोई है, को भी निपटाया जाता है।

42. फिर भी, अपने शिकायत को दूर करने के लिए याची को विधि के समुचित न्यायालय के समक्ष जाने के लिए स्वतंत्र छोड़ा जाता है।

(सुजित नारायण प्रसाद, न्यायमूर्ति)

मैं सहमत हूँ

(प्रदीप कुमार श्रीवास्तव, न्यायमूर्ति) **(प्रदीप कुमार श्रीवास्तव, न्यायमूर्ति)**

(यह अनुवाद 02 शिवा कान्त तिवारी पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया)